परिचय

आराधना का अर्थ

राल्फ पी. मार्टिन ने लिखा: ''[आराधना] किसी व्यवहार द्वारा प्रेरित किए गए कार्यों का संकेत करता है, जो किसी दूसरे व्यक्ति या वस्तु के गुण का सम्मान, आदर या वर्णन करता है। पुराने नियम और नये नियम के सम्बन्ध में आराधना विशेष रूप से परमेश्वर की आराधना का संकेत हैं।[1]'' न तो पुराने नियम की इब्रानी और न नये नियम की यूनानी भाषा में ''आराधना'' से मिलता-जुलता कोई शब्द है, परन्तु दोनों भाषाओं में ऐसे शब्द हैं जो आराधना के कार्यों को परिभाषित करते हैं। इब्रानी शब्द *shahah* जिसका अधिकतर अनुवाद ''worship''[2] या आराधना होता है, का अर्थ है ''भूमि पर चित गिर जाना।'' इब्रानी क्रिया *'abad'* का अर्थ यूनानी क्रिया *latreuo* की तरह ''सेवा करना'' है।[3]

यूनानी शब्द *proskuneo* जो मूलत: ''की ओर चुम्बन'' है, का इस्तेमाल नये नियम में अधिकतर आराधना के संकेत के लिए हुआ है (मत्ती 4:10; लूका 24:52; यूहन्ना 4:20, 21)। यह आमतौर पर प्रथा किसी व्यक्ति के सामने भूमि पर चित गिर कर भूमि को, उसके पांवों को, या उसके वस्त्र के छोर को चूमने की थी। फारसी लोगों द्वारा ऐसा अपने पूजनीय राजाओं के लिए और यूनानियों द्वारा अपनी मूर्तियों और अन्य पवित्र वस्तुओं के सम्मान में किया जाता था। बेशक इसका अर्थ हमारे शब्द ''आराधना'' के जैसा बिल्कुल नहीं है, परन्तु *proskuneo* किसी भी अन्य यूनानी शब्द से अधिक ही आराधना के विचार को बताता है।

नये नियम के अन्य शब्दों का अनुवाद ''आराधना'' या ''आराधक'' बहुत कम हुआ है, इनमें यूनानी शब्द *proskuneo* की तरह अर्चना या औपचारिक आराधना का अर्थ नहीं मिलता, परन्तु उनका अनुवाद ''आराधना'' शब्द के रूपों का इस्तेमाल करते हुए किया गया है।[4]

आराधना के बारे में पिछले व्यवहार

पिछले व्यवहारों से हमें आराधना को समझने में सहायता मिल सकती है। मैसोपोटामिया के प्राचीन सृष्टि की कथा में, मर्दूक को देवताओं की सेवा करने के लिए मानवीय जीवों को बनाने का चयन करते हुए दिखाया गया है। निम्न कथन मनुष्य की सृष्टि करने के समय मर्दूक की ओर से कहा माना जाता है: ''उसे देवताओं की सेवा का काम दिया जाएगा ताकि उन्हें आराम मिल सके!''[5]

यह विचार मनुष्य को देवताओं को उनके परिश्रम से राहत दिलाने और उन्हें आनन्द देने के लिए सेवक के रूप में दिखाता है। ऐसी सेवा के द्वारा मनुष्य जाति ने देवताओं का आदर करके और उनकी आवश्यकताओं को पूरा करके उनकी आराधना करनी थी। यह विचार कि मनुष्य ऐसी आवश्यकताओं को पूरा कर सकता था, देवताओं को उस सेवा पर निर्भर बना देता है, जो मनुष्य उन्हें देता है। जॉन ई. बरखर्ट द्वारा किया गया यह अच्छा अवलोकन है:

> इब्रानी लोगों के लिए परमेश्वर, परमेश्वर है, चाहे उसकी सेवा की जाए या न; और परमेश्वर सेवा करवाने का हकदार है, परमेश्वर के सेवकों को किसी प्रकार के पुरस्कार के लिए नहीं बल्कि परमेश्वर के अपने गुण के कारण सेवा करनी चाहिए। परमेश्वर को परमेश्वर होने के लिए महिमा की आवश्यकता नहीं है; परन्तु परमेश्वर होने के कारण परमेश्वर इसे परमेश्वर होने के अधिकार से मांगता है।[6]

यूथिफ्रो में अफलातून ने तर्क दिया कि हमारी आराधना से देवता प्रभावित या परिवर्तित नहीं होते। उन्हें उससे जो हम कर सकते हैं, कोई लाभ नहीं होता और उन्हें हम से किसी चीज़ की आवश्यकता नहीं है। उनके पास सब कुछ है और उन्हें कोई कमी नहीं है। बरखर्ट ने लिखा है:

> मध्य युग के धर्मशास्त्रियों में थॉमस अक्विनस पर इस बहस को गम्भीरता पूर्वक लेना छोड़ दिया गया कि उसने तर्क दिया कि आराधना परमेश्वर के लिए नहीं बल्कि हमारे लिए है। सोलहवीं सदी में इस पर कैलविन ने प्रत्युत्तर दिया कि परमेश्वर की उचित अर्चना मसीहियत का परम उद्देश्य है। ... और बीसवीं शताब्दी में अर्चना के विषय को उठाते हुए एवलिन अंडरहिल ''निष्काम आनन्द'' और ''पूर्ण पूजनीय प्रत्युत्तर'' की बात करता है। ऐसे आनन्दों से आराधना सचमुच वर्थ-शिप की बात हो जाती है। यह मूल्य के केन्द्र के रूप में परमेश्वर को पूजनीय प्रत्युत्तर, परमेश्वर को स्वाभाविक योग्य समझना है।[7]

आराधना की बाइबली अवधारणा

बाइबल में दी गई अवधारणा यह है कि परमेश्वर जो बुराई से अलग है, और स्वभाव से पवित्र है, हमारे साथ अपने आप को मिला लेता है कि हमारी आवश्यकताओं को प्रेमपूर्वक पूरा करता है। हमें परमेश्वर की महानता को पहचानते हुए और उसे सब अच्छे दानों का श्रेष्ठ देने वाला मानते हुए उसकी आराधना करनी चाहिए (याकूब 1:17)।

हमारी आराधना इस पर आधारित नहीं होनी चाहिए कि हम परमेश्वर के लिए क्या कर सकते हैं, बल्कि इस पर आधारित होनी चाहिए कि वह हमारे लिए क्या करता है, क्योंकि हम उसकी भय योग्यता और अनुग्रह को समझते हैं इसलिए हमें वह करने की इच्छा करनी चाहिए, जो हम आराधना में अपनी श्रद्धा, प्रशंसा, समर्पण और समझ से कर सकते हैं। परमेश्वर ऐसी ही अपेक्षा करता है और इसे केवल तभी ग्रहण करता है, यदि यह कृतज्ञ मन से हो। ज़बर्दस्ती की जाने वाली गतिविधियां और मशीन की तरह बात मानना केवल बाहरी प्रदर्शन है और परमेश्वर उन्हें आराधना नहीं मानता।

आराधना हमारे परमेश्वर की महान शक्ति और उसके अनुग्रहकारी कार्यों को समझने का नतीजा होनी चाहिए। हमें इन्हें कृतज्ञता से उसकी इच्छा के अनुसार व्यक्त करते हुए मानना चाहिए। हमारी आराधना का केन्द्र बिन्दु और स्रोत परमेश्वर ही है। आराधना का आरम्भ हमने नहीं किया, सिवाय इस बोध के कि परमेश्वर को समझने की हमारी समझ हमें उसकी आराधना करने को प्रेरित करती है।

परमेश्वर को हमारी आराधना की आवश्यकता नहीं है, परन्तु हमें उसकी आराधना उसकी महानता, भलाई और प्रेम के कारण करनी आवश्यक है। हमारा प्रत्युत्तर उस सबके लिए जो वह

है और जो वह करता है, दिल से आभार व्यक्त करने के कारण होना चाहिए। यदि हम आराधना करने में असफल रहते हैं, तो हम आराधना के हकदार परमेश्वर की अवहेलना और अपमान करते हैं, जो हमारी ओर से इतनी कृपा से काम करता है।

सच्चे मन से बाहरी अभिव्यक्तियों का न होना परमेश्वर के लिए खाली, व्यर्थ और बेकार है। एंडी टी. रिची जूनियर ने कहा है:

> ... हमने बाहरी रूप और ''कार्यों'' को ही आमतौर पर इस कार्य के लिए बड़े दुःखद ढंग से अलग समझा है। ''चर्च जाने'' का अर्थ यह नहीं है कि जो गया है उसने सचमुच में आराधना की है। यदि हमने ''चर्च जा रहा'' के बजाय ''आराधना के लिए जा रहा'' कहा हो तो हम शब्दों के प्रयोग में उससे अधिक सही हो सकते हैं, और फिर भी शब्दों के प्रयोग में सुधार के बावजूद इसका अर्थ यह नहीं है कि किए जाने वाले काम में सुधार हो गया है। ... जब तक आराधक की अपनी अभिव्यक्तियां नहीं होती तब तक किसी भी प्रकार का अभ्यास स्वीकार्य नहीं है। ... केवल यह तथ्य कि हमने बेपरवाही से या शारीरिक रूप से इन ''कार्यों'' को किया है, इसे आराधना नहीं बना देता।[8]

परमेश्वर सामूहिक आराधना की इच्छा करता है। हमारी आराधना, आराधना के लिए बनाई गई इमारतों में इकट्ठे होने वाले लोगों तक सीमित नहीं है, परन्तु मसीही सभाओं का होना आवश्यक है। इकट्ठे आराधना करने से हमें ऐसा समय मिल जाता है, जिससे मानवीय मनों को आराधना की ऊंचाइयों तक उठाया जा सकता है, जो अकेले आराधना करने से नहीं हो सकता।

आराधना में आशिषों के लिए पमरेश्वर से विनती करने के अलावा हमारा उद्देश्य उसे उसके बारे में अपने मन के विचार और उसके किए हुए प्रबन्धों के लिए धन्यवाद जताना है। बेशक, हम आराधना से बहुत लाभ पा सकते हैं, परन्तु हमारी सबसे बड़ी आवश्यकता, जो हमारे भीतरी मनुष्य की है, वह परमेश्वर तक पहुंचना और उससे बातचीत करना है। हमारी आराधना में अपने जीवनों में अपने सृष्टिकर्त्ता को उसके योग्य होना बताने के लिए उसे भीतरी आवश्यकता से निजी लाभ गौण है।

आराधना के विभिन्न कार्यों तथा व्यवहारों पर विचार करते हुए हमें पहले इस बात से अवगत होना आवश्यक है कि आराधना क्या नहीं है। आराधना आवश्यक नहीं है कि उग्र या दीवानगी में आकर जताई गई भावनाएं और शारीरिक गतिविधियां हो। यह ज़बर्दस्त प्रदर्शन या मानवीय क्षमताओं और प्रयास का प्रदर्शन नहीं है। यह मानवीय अभिव्यक्ति की छूट नहीं है।

इसके साथ ही आराधना केवल कर्मकांड नहीं है। परमेश्वर को आकर्षित करने वाली बात धूमधड़ाके वाले समारोह से कहीं अधिक है। परमेश्वर चाहता है कि हम उसके नाम में इकट्ठा हों, परन्तु केवल दूसरों के साथ इकट्ठा होना इसे आराधना नहीं बना देता।

अब हम आगे बढ़ते हुए उस सब पर विचार करेंगे, जो परमेश्वर की आराधना में शामिल होना चाहिए। **आराधना में शामिल है ...**

- परमेश्वर की महिमा करना

  ''महिमा''-इब्रा.: *pa'ar* (यशायाह 60:21ख; 61:3ख; 66:5); इब्रा.: *kabed* (भजन

संहिता 22:23; 86:12); इब्रा.: *kebod* (भजन संहिता 29:2); यू.: *doxazo* (मत्ती 5:16; 9:8)।

- भय व्यक्त करना
  ''भय'' व्यक्त करना-इब्रा.: *gur* (भजन संहिता 33:8); यू. *phobeo* (मत्ती 9:8); यू.: *deos* (इब्रानियों 12:28)। इन शब्दों के पीछे का मूल अर्थ भय, शायद आदर के कारण है।
- परमेश्वर को बड़ाई देना
  ''बड़ाई देना''-इब्रा.: *gadal* (भजन संहिता 35:27; 40:16; 70:4; मलाकी 1:5); यू.: *megaluno* (प्रेरितों 19:17)।
- परमेश्वर को आदर देना
  ''आदर''-इब्रा.: *Kabed* (यशायाह 29:13); यू.: *doxazo* (रोमियों 1:21; 1 तीमुथियुस 6:16)। इन दोनों शब्दों का अनुवाद ''महिमा'' भी हुआ है (प्रकाशितवाक्य 4:9, 11; 5:12, 13)।
- भक्ति
  ''भक्ति''-इब्रा.: *yare'* (भजन संहिता 2:11; 5:7; 119:38); यू.: *eulabeia* (इब्रानियों 12:28)।
- उसे धन्य कहना
  ''धन्य''-इब्रा.: *barak* (भजन संहिता 16:7; 26:12)।
- उसकी महिमा करना
  ''महिमा'' इब्रा.: *halal* (भजन संहिता 104:35); इब्रा.: *tehillah* (यशायाह 42:8, 10, 12); इब्रा.: *zamar* (भजन संहिता 30:4; 40:3); यू.: *aineo* (लूका 19:37; प्रेरितों 2:47)।
- उसे ऊंचा करना
  ''ऊंचा''-इब्रा.: *rum* (भजन संहिता 18:46; 21:13)।
- आनन्द करना
  ''आनन्द''-इब्रा.: *gil* (भजन संहिता 35:9); इब्रा.: *samach* (भजन संहिता 63:11); यू.: *chairo* (फिलिप्पियों 4:4)।
- कृतज्ञता
  ''धन्यवाद''-इब्रा.: *yadah* परमेश्वर (भजन संहिता 7:17; 9:1); यू.: *eucharisteo* (लूका 17:16; कुलुस्सियों 3:17)।

आराधना जो आराधना है

सच्ची आराधना उस पर ध्यान करने पर आधारित है, जो परमेश्वर ने किया है, यानी यह उसकी महानता और भलाई पर ध्यान करना और उसकी भय योग्य उपस्थिति का अहसास करना है। आराधक को उकसाने, उत्तेजित करने, जगाने या आराधना के लिए सचेत करने के लिए जोश दिलाने वाले की आवश्यकता नहीं है। ऐसे दाव-पेंच केवल उन्हीं के लिए आवश्यक हैं, जो

धन्यावादी मन से या महिमा करने नहीं आते। आराधना तो कृतज्ञता और प्रेम से भरे मनों की गहराई में से अर्थात उन मनों से जो परमेश्वर में पाई जाने वाली भलाई और योग्यता पर ध्यान करते हुए मानते हैं कि उन्हें उनकी आराधना करनी चाहिए, अपने आप निकलती है।

कोई बाहरी प्रयास उस दीन मन वाले को आराधना के लिए कभी उकसा नहीं सकता, जो प्रभु के प्रति श्रद्धा और अर्चना में सदा ऊपर देखने को उत्सुक रहता है। हमें प्रबन्धों तथा परिस्थितियों को देने की कोशिश करनी चाहिए जो आराधना के लिए सहायक हों, परन्तु इनसे आराधना को सुनिश्चित या उत्पन्न नहीं किया जा सकता। ऊंची आवाज़, विशेष प्रकाश, शारीरिक हाव-भाव और तेज़ी से होने वाली गतिविधियों से उत्तेजना और भावनाओं को तो भड़काया जा सकता है; परन्तु वे किसी खाली मन में महिमा नहीं डाल सकती। आराधना हलचल और शोरगुल से कहीं बढ़कर है।

आराधना को बाहर से डाला नहीं जा सकता, बल्कि यह मनुष्य के मन के भीतर से निकलनी आवश्यक है। यह ऐसे मन का परिणाम है, जो सृष्टि के अनुग्रहकारी और शक्तिशाली परमेश्वर को स्तुति, समर्पण और प्रेम दिखाना चाहता है। इन विचारों और भावनाओं को शान्त और गंभीर ढंग से या उल्लास और आनन्द के प्रदर्शन से व्यक्त किया जा सकता है। सच्ची आराधना मन के बाहर की उत्तेजनाओं के बजाय उससे होती है, जिसने अन्दर से मन को हिला दिया हो।

परमेश्वर की आराधना करने की इच्छा करने वालों को आराधना के लिए उत्तेजित करने वाले धार्मिक समूहों के सुनियोजित प्रयासों को भूल जाना चाहिए। इसके बजाय हमें परमेश्वर को जानना, उसके मार्गों को समझना और उन आशिषों पर जो वह देता है, ध्यान करना चाहिए। जो कुछ परमेश्वर है और जो वह करता है, इस सब की समझ से हमें उसकी आराधना करने अर्थात ऐसा कार्य करने को तैयार होने से कि मनुष्य द्वारा बनाई गई कोई भी योजना पूरा नहीं कर सकती। इस ढंग के आधार पर परमेश्वर की आराधना करने की इच्छा करते हुए हमें आश्वस्त होना चाहिए कि वे कार्य जो हम अपनी आराधना को व्यक्त करने के लिए करते हैं, परमेश्वर को स्वीकार्य है।

सारांश

जब हम परमेश्वर की आराधना अपने मनों के साथ करने के लिए पहुंचते हैं तब हम सबसे अच्छी जगह पर होते हैं। आराधना के किसी और कार्य का परमेश्वर के साथ संगति से अधिक महत्व नहीं है। परमेश्वर की खूबी को पहचान कर उसके साथ जुड़ने पर अपने मनों की अभिव्यक्ति का मानवीय अनुभव में कोई सानी नहीं है।

टिप्पणियां

[1]*दि न्यू इंटरनैशनल स्टैंडर्ड बाइबल इन्साइक्लोपीडिया,* संशो., संस्क., ज्योफ्री डब्ल्यू. ब्रोमिले (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1988), 4:1117-18 में राल्फ पी. मार्टिन ''वरशिप।'' [2]आराधना के लिए अंग्रेजी शब्द ''worship'' पुरानी अंग्रेज़ी के *weorth* (''वर्थ'') और *scipe* (''शिप'') से लिया गया था। ''शिप'' का अर्थ फ्रैंड**शिप**, फैलो**शिप**, और रिलेशन**शिप** की तरह अवस्था, गुण या स्थिति है। ''वर्थ-शिप'' (वरशिप) व्यक्ति के समर्पण की बात में पाए जाने वाले वर्थ की स्थिति या गुण को व्यक्त करता है। अपनी महानता,

भय, योग्यता और अद्‌भुत कामों में परमेश्वर में यह योग्यता ह। [3]फिलिप्पियों 3:3; इब्रानियों 9:9; 10:2 में *latreuo (लेटरियो)* है। संज्ञा रूप *latreia* का अनुवाद रोमियों 12:1 और इब्रानियों 9:1, 6 में ''सेवा'' किया गया है। [4]कुछ उदाहरण हैं *eusebeo* (जिसका अर्थ ''श्रद्धालु होना,'' ''धार्मिक''; प्रेरितों 17:23); *sebazomai* (''श्रद्धा दिखाना''; रोमियों 1:25); *sabasma* (''श्रद्धा की वस्तु''; प्रेरितों 17:23; 2 थिस्सलुनीकियों 2:4); *theskeia* (''धार्मिक''; कुलुस्सियों 2:18); *sebo* (परमेश्वर के लिए ''भय'' या ''भक्ति''; मत्ती 15:9; मरकुस 7:7; प्रेरितों 16:14; 18:7, 13; 19:27) [5]जेम्स बी. प्रिचर्ड, सं., *द एंशिएंट नियर ईस्ट: एन एंथोलॉजी ऑफ़ टैक्स्ट्स एण्ड पिक्चर्स* (प्रिंसटन: प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रैस, 1958), 36. [6]जॉन ई. बरखर्ट, *वरशिप* (फिलाडेल्फिया: वेस्टमिंस्टर प्रैस, 1982), 16. [7]वही. [8]एंडी टी. रिची, जूनि., *दाओ शेल्ट वरशिप द लार्ड दाइ गॉड* (ऑस्टिन, टैक्सस: फर्म फाउंडेशन पब्लिशिंग हाउस, 1969), 6-7.